सद्‌गुरवे नमः

महाभारत मीमांसा

पंद्रहवां : आश्रमवासिक पर्व

. धृतराष्ट्र के साथ पाण्डवों का बरताव

जनमेजय ने पूछा–मेरे परपितामह पांडव राज्य प्राप्त होने के बाद महाराजा धृतराष्ट्र से कैसा बरताव करते थे?

वैशंपायन ने कहा–युधिष्ठिर धृतराष्ट्र को आगे करके प्रजा का पालन करते थे। विदुर, संजय तथा युयुत्सु धृतराष्ट्र की सेवा में उपस्थित रहते थे। युधिष्ठिर सभी काम में धृतराष्ट्र से सलाह लेते थे। इस प्रकार पंद्रह वर्ष बीत गये। पांडव प्रतिदिन धृतराष्ट्र के पास जाकर उनके चरणों में प्रणाम करते थे और कुछ समय तक उनकी सेवा में बैठे रहते थे और वे सदैव उनके अधीन रहते थे। धृतराष्ट्र भी स्नेह से पांडवों का मस्तक सूंघकर जब उनको विदा करते तब वे जाकर अपने काम में लगते थे। द्रौपदी, सुभद्रा तथा पांडवों की अन्य महिलाएं भी कुंती और गांधारी दोनों सासुओं की समान रूप से सेवा करती थीं।

युधिष्ठिर कीमती बिस्तर, कपड़े, आभूषण तथा उपयोग की चीजें तथा अनेक प्रकार खाने-पीने की उत्तम वस्तुएं धृतराष्ट्र को समर्पित किया करते थे। इसी प्रकार कुंती भी अपनी जेठानी गांधारी की सासु की तरह सेवा करती रहती थीं। विदुर, संजय और युयुत्सु ये तीनों तो सदैव धृतराष्ट्र की सेवा में ही रहते थे। द्रोणाचार्य के साले कृपाचार्य भी धृतराष्ट्र के पास रहते थे। वेदव्यास भी समय-समय से धृतराष्ट्र के पास बैठकर उनको कुछ ज्ञान की बात सुनाया करते थे। विदुर जी धृतराष्ट्र की आज्ञा से उनके धार्मिक कार्य करते-करवाते थे। विदुर जी की अच्छी नीति के कारण धृतराष्ट्र के बहुत कार्य थोड़े खर्चों से निपट जाते थे। धृतराष्ट्र कैदियों को कैद से छोड़ देते; जिनको वध का दण्ड मिला होता, उनको भी धृतराष्ट्र प्राणदान दे देते थे। इन बातों को लेकर युधिष्ठिर उनसे कुछ नहीं कहते थे। विहार और यात्रा के समय युधिष्ठिर उनको सब प्रकार का

धन एवं सुविधाएं देते थे। धृतराष्ट्र के पास रसोई के काम में प्रवीण आरालिक, सूपकार तथा रागखांडविक उपस्थित रहते थे। उत्तम मदिरा, हलकी मदिरा, मांस आदि धृतराष्ट्र के पास पहुंचते रहते थे।

भिन्न-भिन्न देशों से आये राजे-महाराजे धृतराष्ट्र के स्वागत में उपस्थित रहते थे। कुंती, द्रौपदी, सुभद्रा, नागकन्या उलूपी, चित्रांगदा आदि देवियां गांधारी की सेवा में दासी की तरह उपस्थित रहती थीं। युधिष्ठिर अपने भाइयों को यह उपदेश देते थे कि राजा धृतराष्ट्र के पास ऐसा बरताव करो कि उन्हें थोड़ा भी कष्ट न हो। युधिष्ठिर की सीख अर्जुन, नकुल तथा सहदेव पालन कर धृतराष्ट्र के साथ उत्तम बरताव करते थे; किंतु भीम का विचार अलग रहता था। भीम के मन से यह बात कभी नहीं निकल सकी कि जुआ खेल के समय जो कुछ अनर्थ हुआ वह धृतराष्ट्र की खोटी बुद्धि का परिणाम था (अध्याय)।

इस प्रकार पांडवों से सम्मानित होकर धृतराष्ट्र आनंदपूर्वक रहते थे। धृतराष्ट्र ब्राह्मणों को दान रूप में निःशुल्क जमीन देते थे। इसके लिए युधिष्ठिर उनका सहयोग करते थे। युधिष्ठिर अपने भाइयों और मंत्रियों से कहा करते थे "राजा धृतराष्ट्र हम सबके माननीय और पूज्य हैं। जो इनकी आज्ञा और सेवा में रहता है वह मेरा प्रिय है। यदि इसका उलटा करेगा तो वह दण्ड पायेगा। ध्यान रहे, राजा धृतराष्ट्र जब अपने पिता और पुत्रों के श्राद्ध आदि में जितना धन चाहें, उतना उनको मिलना चाहिए।" युधिष्ठिर को यह चिंता सदा बनी रहती थी कि पुत्र-पौत्रों के मारे जाने से पीड़ित हुए राजा धृतराष्ट्र हमारी ओर से अप्रिय व्यवहार पाकर कहीं अपना प्राण न त्याग दें। अपने पुत्रों के जीवित समय में धृतराष्ट्र को जो सुख-सुविधा मिली थी, वह अब भी मिली रहे। इस बात के लिए युधिष्ठिर की पूरी व्यवस्था थी। धृतराष्ट्र भी उनके प्रति स्नेह रखते थे।

धृतराष्ट्र को युधिष्ठिर का कोई व्यवहार अप्रिय नहीं लगता था। गांधारी भी अपने पुत्रों का शोक भूलकर पांडवों के प्रति पुत्रवत व्यवहार करती थी। युधिष्ठिर के भय से कोई भी मनुष्य धृतराष्ट्र और दुर्योधन की गलतियों की चर्चा नहीं करता था। इस प्रकार युधिष्ठिर के धैर्य और शुद्ध व्यवहार से गांधारी, धृतराष्ट्र तथा विदुर विशेष प्रसन्न थे, किंतु भीम के बरताव से उन्हें संतोष नहीं था। भीम युधिष्ठिर का अनुगमन करते थे, परंतु धृतराष्ट्र को देखकर उनके मन में दुर्भावना आ जाती थी। युधिष्ठिर का धृतराष्ट्र के साथ उत्तम बरताव देखकर भीम ऊपर से वैसा करने का प्रयास करते थे, परंतु उनका मन धृतराष्ट्र से विरुद्ध रहता था (अध्याय)।

मीमांसा

ऊपर तीन रसोइयों के नाम आये हैं–आरालिक, सूपकार तथा रागखांडविक। अरा नाम के शस्त्र से काटकर बनाये जाने वाले खाद्य-पदार्थ को अरालु कहते थे, और इसको अच्छी तरह बनाने वाले को आरालिक कहते थे। दाल या जूस संबंधी खाद्य बनाने वाले को सूपकार कहते थे। पीपल, सोंठ और चीनी मिलाकर मूंग का रसा बनाने वाले को रागखांडविक कहते थे।

. राजा धृतराष्ट्र का वन जाने का आग्रह और उन्हें अनुमति

धृतराष्ट्र के मन में भीम के प्रति तथा भीम के मन में धृतराष्ट्र के प्रति दुर्भाव रहता था। भीम छिपकर धृतराष्ट्र को अप्रिय लगने वाला काम किया करते थे। भीम अपने आदमियों द्वारा धृतराष्ट्र की आज्ञा का उल्लंघन भी करवा देते थे। धृतराष्ट्र की पूर्व काल की गलतियों की याद कर भीम हर क्षण क्षुब्ध रहते थे। एक दिन भीम ने अपनी भुजाओं पर ताल ठोंककर और गांधारी तथा धृतराष्ट्र को सुनाते हुए कहा–"मैंने ही अंधे राजा के पुत्रों को यमलोक भेजा है। मेरी भुजाओं में धृतराष्ट्र के बेटे पिस गये हैं।"

धृतराष्ट्र तथा गांधारी को युधिष्ठिर के आश्रय में रहते अब तक पन्द्रह वर्ष बीत गये थे। भीम के उपर्युक्त वचन उन दोनों को कांटे के समान चुभे। अतएव धृतराष्ट्र को खेद और वैराग्य हुआ। युधिष्ठिर, कुंती, अर्जुन तथा द्रौपदी को इस बात का पता नहीं था। नकुल-सहदेव तो धृतराष्ट्र के अनुकूल ही काम तथा बात करते थे।

धृतराष्ट्र ने अपने मित्रों को बुलवाकर तथा आंखों में आंसू भरकर रुंधे कण्ठ से कहा–मित्रो! सब जानते हैं कि मेरे अपराध से ही सारा अनर्थ हुआ है। दुर्योधन के दुर्व्यवहार से सब तंग थे। मैंने श्रीकृष्ण, भीष्म, विदुर, कृप, वेदव्यास, द्रोण आदि की सही राय का प्रयोग नहीं किया। पांडवों के बाप-दादों का राज्य उन्हें नहीं लौटाया। यह अपनी भूल मुझे कांटे के समान चुभती है। पंद्रह वर्षों के बाद आज मेरी नींद खुली है और अब मैं नियमों का पालन करने लगा हूं। इस समय मैं दो या चार दिन पर थोड़ा भोजन पेट की आग बुझाने के लिए लेता हूं। इस बात को केवल गांधारी जानती हैं। अन्य लोग यही जानते हैं कि मैं प्रतिदिन भोजन करता हूं। युधिष्ठिर के डर से लोग मेरे पास आते हैं। युधिष्ठिर मुझे अधिक-से-अधिक सुख-सुविधा देने के लिए चिंतित रहते हैं। हम दोनों प्राणी मृगचर्म पहनकर तथा कुशासन पर बैठकर मंत्रजप करते हैं और

भूमि पर सोते हैं। हमें पुत्रों की चिंता नहीं है, क्योंकि वे युद्ध में पीठ दिखाकर नहीं मरे हैं, अपितु क्षत्रिय धर्मानुसार युद्ध करते हुए मरे हैं।

धृतराष्ट्र ने अन्य लोगों से ऊपर की बातें कहकर युधिष्ठिर से कहा–बेटा! तुमसे सेवित और सुरक्षित रहकर मैं यहां सुख से रहा, बड़े-बड़े दान और श्राद्ध किये। अब मैं वन को जाना चाहता हूं, इसके लिए तुमसे अनुमति चाहता हूं। मैं चीर और वल्कल धारणकर गांधारी के साथ वन में विचरण करूंगा और तुम्हारे लिए सदैव शुभकामना रखूंगा।

युधिष्ठिर ने कहा–महाराज! आप यहां रहकर कष्ट उठाते रहे, इस बात की जानकारी मुझे नहीं हो सकी। अतएव अब मुझे यह राजकाज प्रसन्न नहीं कर सकता। हाय! मेरी बुद्धि बहुत खराब है। राज्य में आसक्त मुझ प्रमादी को धिक्कार है। आप दुख से आतुर हैं और उपवास करके जमीन पर सोते हैं। मैं आपकी इस अवस्था का पता नहीं पा सका। आप मुझे विश्वास दिलाते रहे कि मैं सुखी हूं, किंतु आप आज तक दुख भोगते रहे। महाराज! इस राज्य, भोग और यज्ञ-याग से मुझे क्या लाभ मिलेगा? मैं आपके दुख से बहुत दुखी हूं। आप ही मेरे माता, पिता और गुरु हैं। आपसे अलग होकर हम कहां रहेंगे?

महाराज! युयुत्सु आपके औरस पुत्र हैं। ये राजा हों, अथवा आप जिसे चाहें राजा बना दें। स्वयं ही इस राज्य का शासन करें। मैं ही वन को चला जाऊंगा। पिताजी! मैं पहले से ही अपकीर्ति की आग में जलता रहा, अब आप पुनः न जलाइये। मैं राजा नहीं, आप ही राजा हैं। मैं आपकी आज्ञा बजाने वाला सेवक हूं। आप धर्मज्ञ गुरु हैं। मैं आपको वन जाने की अनुमति कैसे दे सकता हूं? जो कुछ पीछे हुआ, वह होनहार था। उसको लेकर मुझे चिंता नहीं है। हम और अन्य लोग मोह में भ्रमित होकर बहुत अनर्थ कर डाले हैं। मैं आपका पुत्र हूं। गांधारी मेरी वैसी ही माता है जैसी कुंती। राजन! यदि आप मुझे छोड़कर वन चले जायंगे तो मैं सौगंध खाकर कहता हूं कि मैं भी आपके पीछे-पीछे चल दूंगा। आपके चले जाने पर यह सारी पृथ्वी मुझे प्रसन्न नहीं कर सकती। राजन! यह सब राजकाज आपका है। मैं आपके चरणों में सिर रखकर आपसे निवेदन करता हूं कि आप प्रसन्न हो जायं। हम सब आपके अधीन हैं। आपकी मानसिक चिंता दूर होने की हम राह देखते हैं। यदि मुझे आपकी सेवा का अवसर मिलता रहा तो मैं चिंता-रहित हो जाऊंगा।

धृतराष्ट्र ने कहा–बेटा! अब मेरा मन तपस्या में ही लग रहा है। इस कुल में तो इसकी प्रशंसा की जाती है कि जीवन का अंतिम समय वन में बिताया जाय। बहुत दिनों से मैं तुम्हारे साथ रहा और तुमने हमारी बहुत सेवा कर ली है। अब तुम्हें चाहिए कि मुझे वन में जाने की अनुमति दो।

. राजा धृतराष्ट्र का वन जाने का आग्रह और उन्हें अनुमति

धृतराष्ट्र की उपर्युक्त बात सुनकर युधिष्ठिर कांपने लगे और हाथ जोड़े मौन होकर बैठे रहे। धृतराष्ट्र ने संजय और कृपाचार्य से कहा कि तुम लोग मेरी बात युधिष्ठिर को समझाओ। मैं बूढ़ा हूं, असमर्थता से बोलने से जी घबराता है। मेरा मुंह सूख रहा है। इतना कहकर धृतराष्ट्र गांधारी का सहारा लेकर लुढ़क गये। यह सब देखकर युधिष्ठिर बहुत पीड़ित हुए और कहने लगे–मैं धर्म से अनभिज्ञ हूं। मुझे धिक्कार है। मेरी बुद्धि और विद्या को धिक्कार है। यदि पिता धृतराष्ट्र और माता गांधारी भोजन नहीं करते हैं, तो मैं भी भोजन छोड़ दूंगा।

युधिष्ठिर ने उपर्युक्त बातें कहकर अपने हाथों को जल से भिगोकर धृतराष्ट्र के मुंह और छाती को पोंछा। राजा धृतराष्ट्र की चेतना लौट आयी। धृतराष्ट्र ने कहा–युधिष्ठिर! तुम पुनः अपने हाथ को मेरी देह पर फेरो और मुझे छाती से लगा लो। तुम्हारे सुखद स्पर्श से मेरे प्राण लौट आते हैं। मैं तुम्हें हृदय से लगाकर तुम्हारे मस्तक को सूंघना चाहता हूं। इससे मुझे परमतृप्ति मिलती है। मैंने चार दिनों से भोजन नहीं किया है, इसलिए मेरा शरीर अधिक शिथिल हो गया है। तुमसे बोलते समय मुझे जोर लगाना पड़ा, इसलिए निर्बल होकर अचेत हो गया। तुम्हारे स्पर्श से मुझे नया जीवन मिल गया है।

युधिष्ठिर देर तक अपने ज्येष्ठ पिता धृतराष्ट्र के अंगों पर अपने हाथ फेरते रहे। धृतराष्ट्र ने युधिष्ठिर को अपनी दोनों भुजाओं में भरकर उनका मस्तक सूंघा। यह दृश्य देखकर विदुर आदि करुणाविगलित होकर रोने लगे। अधिक दुख के कारण वे लोग युधिष्ठिर से कुछ बात नहीं कर सके।

गांधारी ने अपने मन के भारी दुख को मन में ही दबा रखा था। कुंती के साथ अन्य स्त्रियां गांधारी को घेरकर खड़ी हो गयीं। इसके बाद धृतराष्ट्र ने पुनः युधिष्ठिर से कहा–बेटा! मुझे वन जाने की अनुमति दे दो। बेटा! बार-बार बोलने से मेरा मन घबराता है, अतएव अब मुझे दुख में न डालो।

उक्त बातें सुनकर चारों तरफ से घोर रुदन शुरू हो गया। युधिष्ठिर धृतराष्ट्र को दुर्बल अवस्था में देखकर आंसू बहाते हुए उनसे बोले–राजन! मैं न जीवन चाहता हूं न राज्य। यदि आप मुझे प्रिय मानते हैं तो आप भोजन कीजिए। जो आपको प्रिय हो, मैं वही सोचूंगा। परंतु पहले आप भोजन कीजिए।

धृतराष्ट्र ने कहा–बेटा! तुम मुझे वन में जाने की अनुमति दे दो, तो मैं भोजन करने के लिए तैयार हूं।

इतनी बात चल ही रही थी कि वेदव्यास जी आ गये। उन्होंने कहा–युधिष्ठिर! धृतराष्ट्र जो कुछ चाहते हैं, उसे पूरा करो। इनके सभी पुत्र नष्ट हो चुके हैं और ये बहुत बूढ़े हो चुके हैं, मैं समझता हूं कि ये बहुत दिनों तक यह दुख नहीं झेल पायेंगे। गांधारी परम विदुषी और धैर्यवान हैं, इसलिए ये पुत्र-

शोक को धैर्यपूर्वक सहती आ रही हैं। युधिष्ठिर! तुम धृतराष्ट्र को वन में जाने की अनुमति दो, अन्यथा इनकी यहां व्यर्थ मृत्यु हो जायगी। तुम इन्हें अवसर दो। ये पुराने राजर्षियों के पथ का अनुसरण करें। सभी राजर्षियों ने जीवन के अंतिम समय में वनवास किया है।

युधिष्ठिर ने कहा–भगवन! आप ही हमारे सम्माननीय गुरु हैं। इस राज्य और नगर के आधार भी आप ही हैं। राजा धृतराष्ट्र हमारे पिता और गुरु हैं। धर्मतः पिता ही पुत्र को आज्ञा तथा निर्देश देता है। पुत्र पिता को कैसे आज्ञा दे सकता है?

वेदव्यास ने कहा–युधिष्ठिर! तुम्हारी बात सच है; परंतु धृतराष्ट्र वृद्ध तो हैं ही, अंतिम अवस्था में हैं। अतएव ये मेरी तथा तुम्हारी अनुमति लेकर तपस्या द्वारा शांति-लाभ करें। इनके इस अच्छे काम में बाधा मत पहुंचाओ। युधिष्ठिर! राजर्षियों का यही परम धर्म है कि युद्ध में या वन में उनकी मृत्यु हो। तुमने धृतराष्ट्र और गांधारी की निष्कपट भाव से सेवा की है। अब इनको अपना अंतिम काम करने दो। युधिष्ठिर! धृतराष्ट्र और गांधारी को तुम पर थोड़ा भी क्रोध नहीं है। इन्हें तपस्या के लिए वन जाने दो।

वेदव्यास ने युधिष्ठिर को मना-दना कर राजी कर लिया, अतएव उन्होंने 'अच्छा' कहकर स्वीकार लिया। इसके बाद वेदव्यास अपने आश्रम वन में चले गये।

युधिष्ठिर ने अपने ताऊ धृतराष्ट्र से धीरे से कहा–पिताजी! भगवान वेदव्यास ने जो आज्ञा दी है, आपका जो निश्चय है और कृपाचार्य, विदुर, युयुत्सु और संजय जो कुछ कहेंगे, मैं संदेह-रहित होकर वैसा ही करूंगा; क्योंकि ये सम्माननीय तथा हितैषी हैं। पिताश्री! मैं आपके चरणों में निवेदन करता हूं कि पहले आप भोजन कर लीजिए, तब वन को जाइयेगा (अध्याय –)।

. धृतराष्ट्र का युधिष्ठिर को राजनीति के उपदेश

धृतराष्ट्र तथा गांधारी ने भोजन किया। इसके बाद युधिष्ठिर आदि ने भोजन किया। भोजन-विश्राम के बाद जब धृतराष्ट्र बैठे तब वे अपने पास युधिष्ठिर को बैठा जानकर उनकी पीठ सहलाते हुए राजनीति संबंधी उपदेश करने लगे। उन्होंने कहा–नरेश! राज्य के संचालन में सदैव धर्म को आगे रखना। इसमें प्रमाद नहीं होना चाहिए। विद्वानों की संगत सदैव करना। उनकी बातों को ध्यानपूर्वक सुनना और उनकी सीख का पालन करना। विद्वान लोग तुम्हारे द्वारा

आदर पाकर तुम्हें हित की बात बतायेंगे। मन और इंद्रिय वश में होने से वे सुख के कारण होंगे। जो लोग जांचे-परखे गये हों, पिता-पितामहों के समय से काम देखते एवं करते हों, आचरण तथा मन से शुद्ध हों, ऐसे लोगों को अपना मंत्री बनाना चाहिए। जो अपने राज्य के निवासी हों, जिनकी परीक्षा कर ली गयी हो, ऐसे लोगों को गुप्तचर के पद पर नियुक्त कर शत्रुओं का भेद लेते रहना चाहिए। इसके साथ यह ध्यान रखना चाहिए कि शत्रु तुम्हारा भेद न जान पावें। नगर की सुरक्षा में ऊंचे परकोटे होने चाहिए। कुल और शील जानकर किसी से काम लेना चाहिए। भोजन के समय आत्म-सुरक्षा पर ध्यान होना चाहिए। भोजन, शय्या, आसन, भ्रमण सब समय आत्म-सुरक्षा का ध्यान रखना अत्यावश्यक है। कुल-शील संपन्न, विश्वासपात्र एवं वृद्ध पुरुषों की अध्यक्षता में अंत:पुर की नारियों की सुरक्षा का प्रबंध होना चाहिए।

सभी मंत्रियों या कुछ मंत्रियों को किसी काम के बहाने एकांत स्थान में चारों तरफ बंद जगह में अथवा खुली जगह के मैदान में ले जाकर उनसे गुप्त मंत्रणा करना चाहिए। अधिक लोगों को लेकर देर तक मंत्रणा नहीं करना चाहिए। मनुष्यों का अनुसरण करने वाले वानर, पक्षी तथा मूक-पंगु या मूर्ख मनुष्यों को मंत्रणा की जगह में नहीं रहने देना चाहिए। गुप्त मंत्रणा प्रकट हो जाने पर उसका समाधान असंभव है। गुप्त मंत्रणा से जो लाभ होता है और मंत्रणा फूट जाने पर जो हानि होती है, इसके महत्त्व को तुम मंत्रियों को बारंबार याद दिलाते रहना। न्यायाधीश उसी को चुनना जो विश्वासपात्र, संतोषी और सर्वजन हितैषी हो। गुप्तचरों के द्वारा उनके कार्यों पर भी दृष्टि रखना। न्यायाधीश अपराधियों के अपराध को ठीक से जानकर अपराध के मात्रानुसार उन्हें दंड दें। घूसखोर, परायी स्त्री में रत, कठोर दंड देने के पक्षपाती, असत्य निर्णय देने वाले, कटुवादी, लोभी, दूसरों का धन हड़पने वाले न्यायाधीश की गद्दी के अधिकारी नहीं होते।

तुम प्रात: उनसे मिलो जो तुम्हारे अर्थ मंत्री हैं। सैनिकों का हर्ष बढ़ाते रहना चाहिए। दूतों और गुप्तचरों से मिलने का अच्छा समय संध्याकाल है। प्रात:काल तुम्हें दिन के कार्य का निश्चय करना चाहिए। रात में या दोपहर को तुम्हें घूमकर प्रजा की दशा को देखना चाहिए। कार्यों का क्रम चक्र के समान सदा चलता रहता है। कोष-संग्रह सदैव न्यायपूर्वक होना चाहिए। अन्यायपूर्ण धन-संग्रह कभी नहीं करना चाहिए। राजाओं के दोष देखने वाले राजद्रोहियों को गुप्तचरों से पता लगवाकर उन्हें दूर से ही मरवा देना चाहिए। काम देखकर उसको करने वालों को नियुक्त करना चाहिए। जो अपने आश्रित हैं वे योग्य हों

या अयोग्य, उनसे काम लेना चाहिए। राजन! तुम्हारे सेनापति दृढ़प्रतिज्ञ, शूरवीर, कष्ट सहने में समर्थ, हितैषी, मेहनती और स्वामिभक्त होना चाहिए। कारीगर और शिल्पियों का सदैव भरण-पोषण करना चाहिए। तुम सदैव मित्र और शत्रुओं दोनों के छिद्रों पर ध्यान रखो। जो अपने देश में रहने वाले हैं, जो जिस कार्य के योग्य हों, उनको वैसा काम देकर उनकी जीविका का प्रबंध करना चाहिए। राजा का कर्तव्य है कि वह गुणवानों को ऐसा अवसर दे कि उनके गुणों की वृद्धि हो। वे ही तुम्हारे और तुम्हारे देश के लिए अडिग सहायक होंगे (अध्याय)।

युधिष्ठिर! शत्रु, मित्र तथा मध्यस्थ राजाओं का सदैव ज्ञान रखना चाहिए। अपने मंत्रियों, दुर्ग, जनपद तथा सेना की सुरक्षा होना चाहिए। इन पर शत्रुओं की दृष्टि रहती है। यदि अपना पक्ष दुर्बल है और शत्रुपक्ष बलवान, तो शत्रुपक्ष से मेलमिलाप कर ले। प्रजा में जो दीन-दरिद्र हैं, उनका आदर तथा सहयोग करे। अपनी शरण में आये हुए किसी राजपुरुष का वध नहीं करना चाहिए। अच्छे मनुष्यों से मेलजोल करे तथा दुष्टों को दंड दे। युधिष्ठिर! तुम्हें श्रीकृष्ण, भीष्म तथा विदुर जी सब प्रकार की शिक्षा दे चुके हैं। मेरा तुमसे प्रेम है, इसलिए मैंने भी तुमसे कुछ चर्चा कर दी। इन बातों पर सदैव दृष्टि रखोगे तो सदा सुखी रहोगे। प्रजापालन राजा का परम धर्म है (अध्याय -)।

मीमांसा

राजाओं के दोष देखने वाले को दूर से मरवा देना राजतंत्र का दस्तूर था। जनतंत्र में मंत्रियों की अच्छी-बुरी बातों की आलोचना चलती रहती है। राजद्रोह का अपराध होने पर जनतंत्र में खूब जांच-परखकर ही उन्हें दण्ड दिया जाता है।

. धृतराष्ट्र का पुरवासियों से भी अनुमति लेना तथा मृतजनों का श्राद्ध करना

युधिष्ठिर ने कहा–राजन! जो आप कहते हैं, मैं वैसा ही करूंगा। आप मुझे और उपदेश कीजिए। भीष्म संसार से चले गये, श्रीकृष्ण द्वारका गये, विदुर और संजय आपके साथ जा रहे हैं। अब दूसरा कौन है जो मुझे कुछ बतायेगा?

धृतराष्ट्र ने कहा–बेटा युधिष्ठिर! अब शांत रहो। मैं बोलने में थक जाता हूं। अब वन जाने की अनुमति चाहता हूं। इतना कहकर धृतराष्ट्र गांधारी के भवन में चले गये।

गांधारी ने कहा–राजन! वेदव्यास तथा युधिष्ठिर से आपको अनुमति मिल गयी। अब वन को कब चलोगे?

धृतराष्ट्र दान देना चाहे। उसका प्रबंध युधिष्ठिर ने करवा दिया और धृतराष्ट्र ने वह सब दान कर दिया। कुरुजांगल देश के सभी वर्ग के लोग आये। यह सुनकर धृतराष्ट्र भवन से निकलकर उनके सामने बोले–आप लोग तथा कौरव दोनों बहुत समय से एक साथ रहते आये हैं और दोनों दोनों के मित्र हैं। मैं कुछ कहना चाहता हूं। उस पर आप बिना विचार किये मुझे अनुमति दीजिए।

धृतराष्ट्र ने पुरवासियों से कहा–मैंने गांधारी के साथ वन में जाकर वहां तप से रहने का विचारकर लिया है। इसके लिए वेदव्यास तथा युधिष्ठिर की अनुमति मिल चुकी है। अब आप लोग मुझे इसके लिए आज्ञा दीजिए। आपका और हमारा जो प्रेम संबंध चला आ रहा है, ऐसा होना दुर्लभ है। हमारे सब पुत्र मारे गये हैं। बुढ़ापे ने मुझे और गांधारी को थका दिया है। उपवास से निर्बलता अधिक बढ़ गयी है। मुझे युधिष्ठिर से जो पंद्रह वर्षों में सुख मिला, वह दुर्योधन के राज्य में भी नहीं मिला। एक तो मैं जन्मांध, दूसरा बुढ़ापा, तीसरा मेरे सभी पुत्र मर चुके हैं। अब आप बतायें कि मेरे लिए वन जाने के सिवा दूसरी क्या गति है? अतएव आप लोग मुझे जाने की आज्ञा दें।

उपर्युक्त करुणापूर्ण बातें सुनकर प्रजा फूट-फूटकर रो पड़ी और सब मौन होकर रोते रहे। धृतराष्ट्र ने कहा–महाराज शांतुन ने इस राज्य की सेवा की। उसके बाद भीष्म से सुरक्षित पिता विचित्रवीर्य ने देश को सम्हाला। इसके बाद मेरे छोटे भाई पांडु ने यथायोग्य प्रजा की सेवा की। पांडु के बाद मैंने भी भली-बुरी जो बन सकी, सेवा की। उसमें जो मुझसे भूल हुई हो, उसके लिए मुझे क्षमा करें। इसके बाद दुर्योधन ने राज्य सम्हाला। वह अपनी मूर्खता से पांडवों के प्रति बुरा था, किंतु प्रजा की उसने भी अच्छे ढंग से सेवा की है। मेरे पुत्र के अपराध से जो यह महान संहार हुआ, उसको लेकर जो मुझसे भूलें हुईं, उन पर आप आज ध्यान न देकर मुझे क्षमा करें। 'यह राजा धृतराष्ट्र बूढ़ा है। इसके सब पुत्र मारे गये हैं। इसलिए यह दुखों में डूबा है और यह अपने पुराने राजाओं का वंशज है, ऐसा समझकर आप लोग मेरे अपराधों को क्षमा करें, और मुझे वन जाने की आज्ञा दें। यह बूढ़ी गांधारी भी आप सबसे क्षमा चाहती है। हम दोनों आप प्रजा की शरण में हैं। राजा युधिष्ठिर आप लोगों के पालक हैं। आप उनके भले-बुरे सभी समय में सहायक रहे। युधिष्ठिर तथा इनके अन्य चार भाई सदैव आपकी सेवा करेंगे। मैं अपना कर्तव्य समझकर यह सब कह रहा

हूं। मैं राजा युधिष्ठिर को आपके हाथों में धरोहर रूप में सौंप रहा हूं। इसी भांति आप लोगों को इन राजा युधिष्ठिर के हाथों धरोहर रूप में सौंपता हूं। मैं, मेरे पुत्र तथा उनसे संबंधित लोगों ने जो आपके साथ अपराध किया हो, मैं उस सबके लिए आप सबसे क्षमा मांगता हूं।' धृतराष्ट्र के ऐसा कहने पर सब आंसू बहाते हुए एक-दूसरे का मुंह देखने लगे। कोई कुछ कह न सका (अध्याय -)।

बूढ़े राजा धृतराष्ट्र की उपर्युक्त बातें सुनकर नगर और जनपद के निवासी ठगमारे-से हो गये। सबके कंठ आंसुओं से अवरुद्ध हो गये। प्रजा को मौन समझकर धृतराष्ट्र ने पुनः कहा–पुण्यात्मा प्रजाजन! आप मुझे वन में जाने की आज्ञा दें।

प्रजा ने धैर्य रखकर आपस में बात की और सब एक मत होकर 'सांब' नामक ब्राह्मण द्वारा अपनी बात कहने का निर्णय लिया। वे ब्राह्मण सदाचारी, समाज द्वारा सम्माननीय, अर्थज्ञान में निपुण, वेद-विद्वान तथा निर्भय प्रवक्ता थे। उन्होंने राजा धृतराष्ट्र से कहा–राजन! यहां की प्रजा अपनी बात मुझसे कहलाना चाहती है। उसे आपके सामने मैं प्रस्तुत करता हूं–राजन! आपका सारा कथन सत्य है। कौरव-राजाओं से हम प्रजा का परस्पद दृढ़ सौहार्द स्थापित है। कौरव वंश के सभी राजा प्रजापालक रहे हैं। आप लोग पिता तथा बड़े भाई के समान हम लोगों का पालन करते आ रहे हैं। राजा दुर्योधन ने भी हम लोगों के साथ कभी कोई अनुचित बरताव नहीं किया है। आप वेदव्यास की सम्मति के अनुसार अपना बरताव करें। राजन! आप हमें त्यागकर जब चले जायंगे, तब हम शोक-सागर में डूबे रहेंगे और आपके गुणों के स्मरण हमें घेरे रहेंगे।

राजा शांतनु, चित्रांगद, विचित्रवीर्य, भीष्म, पांडु तथा आपने जैसे हम प्रजा का पालन किया, वैसे ही दुर्योधन ने भी हमारा पालन-पोषण किया है। आपके पुत्र दुर्योधन ने हमारे साथ थोड़ा भी अन्याय नहीं किया है। हम राजा दुर्योधन पर पिता की तरह विश्वास करते थे और उनके राज्यकाल में बड़े सुख से रहते थे। राजा युधिष्ठिर हजारों वर्ष हमारा पालन करें, हमारी यही शुभकामना है।

सांब ने आगे कहा–राजन! इस युद्ध में जो यहां विनाश हुआ है, इसका कारण जो आपने दुर्योधन को बताया है, हम लोग यह नहीं मानते हैं। हम समझते हैं कि ऐसा होनहार था, भवितव्य था। इसमें किसी को दोष देना ठीक नहीं है। आपका प्रजा के प्रति स्नेह है। युधिष्ठिर आपके इस प्रजा-वात्सल्य को और आगे बढ़ायेंगे, यह हम लोगों को पूर्ण विश्वास है। राजा युधिष्ठिर अधर्मी

लोगों का भी पालन करेंगे। आप युधिष्ठिर की तरफ से निश्चिंत होकर अपने धार्मिक कार्य में लग जाइये।

सांब की उक्त बातें सुनकर पूरी सभा ने उन्हें साधुवाद दिया। धृतराष्ट्र ने भी सांब की बातों की प्रशंसा की और सब परस्पर अभिवादन कर विदा हो गये (अध्याय)।

अगले दिन प्रातः धृतराष्ट्र ने विदुर से कहा–मेरा मन पुत्रों का श्राद्ध करने तथा दान करने का है। यह बात युधिष्ठिर को बताओ। विदुर युधिष्ठिर के पास जाकर बोले–महाराज धृतराष्ट्र वनवास की दीक्षा ले चुके हैं। वे कार्तिक पूर्णिमा को, जो निकट आ गयी है वन के लिए यात्रा करेंगे। वे तुमसे धन की याचना करते हैं, जिससे युद्ध में मारे गये अपने पुत्रों तथा अन्य राजाओं के नाम पर श्राद्ध कर्म कर सकें।

विदुर की उक्त बातें सुनकर अर्जुन तथा युधिष्ठिर प्रसन्न हुए; परंतु दुर्योधन के अन्याय की बात भीम के मन में जमी थी, इसलिए उनको यह प्रस्ताव बुरा लगा। अर्जुन ने भीम को समझाया और कहा–भैया भीम! धृतराष्ट्र हमारे बड़े पिता हैं और वृद्ध पुरुष हैं। वे वनवास की दीक्षा ले चुके हैं। वे वन जाने के पहले भीष्म आदि समस्त दिवंगतों के नाम से श्राद्धकर्म करना चाहते हैं, तो उनके इस काम के लिए आपको धन देना चाहिए। सौभाग्य की बात है कि आज धृतराष्ट्र हम लोगों से धन की याचना कर रहे हैं। समय का कैसा उलटफेर है? पहले जिनसे हम याचना करते थे, वे आज हमसे याचना करते हैं। अतएव भीम! आज उन्हें धन दें, दूसरी बात न सोचें। यदि आज हम उन्हें धन नहीं देंगे, तो हमें पाप पड़ेगा। आप अपने बड़े भाई युधिष्ठिर के उत्तम बरताव से प्रेरणा लें। इस बात को सुनकर युधिष्ठिर ने अर्जुन की बड़ी प्रशंसा की।

भीम ने कुपित होकर अर्जुन से कहा–हम लोग स्वयं ही भीष्म, राजा सोमदत्त, भूरिश्रवा, बाह्लीक, द्रोणाचार्य और मरे हुए संबंधियों का श्राद्ध करेंगे। हमारी माता कुंती कर्ण के नाम पर पिंडदान करेगी। मेरा विचार है कि धृतराष्ट्र उनका श्राद्ध न करें। दुर्योधन आदि कुलांगार तो भारी-से-भारी कष्ट में पड़ें, यही सोचना चाहिए। अर्जुन! तुम द्रौपदी का अपमान, बारह वर्ष का वनवास तथा एक वर्ष का अज्ञातवास कैसे तुरंत भूल गये? उन दिनों धृतराष्ट्र का हम लोगों के लिए प्रेम कहां चला गया था जब हमारे शरीर से आभरण उतारे गये, हमें मृगचर्म पहनाया गया और हमें वनवास दे दिया गया? उस समय धृतराष्ट्र, भीष्म, द्रोण, सोमदत्त कहां चले गये थे? सब तो सामने थे। हम सब जब

वनवास काट रहे थे, तब ये ताऊ राजा धृतराष्ट्र हमारे लिए कौन हमदर्दी का काम कर रहे थे? अर्जुन! तुम इस बात को भूल गये जब यह कुलांगार धृतराष्ट्र जुआ शुरू कराकर विदुरजी से बारंबार पूछता था कि अबकी दावं में हम लोगों ने क्या जीता है? भीम की उक्त बातों को सुनकर युधिष्ठिर ने डांटकर उन्हें कहा–'चुप रहो।'

अर्जुन ने भीम को समझाना शुरू किया–आप हमारे बड़े भाई हैं, गुरु हैं; अतएव मैं आपके सामने इतना ही कह सकता हूं कि राजा धृतराष्ट्र हम सबके लिए समादर के योग्य हैं। साधु स्वभाव के लोग दूसरों के दोषों की याद नहीं करते, अपितु उनके सद्‌गुणों की याद करते हैं। युधिष्ठिर ने अर्जुन की अनुकूल बात सुनकर विदुर जी से कहा–आप राजा धृतराष्ट्र से जाकर कह दें कि वे अपने पुत्रों के श्राद्ध के लिए जितना चाहते हैं, उतना धन हम उन्हें दे देंगे। भीष्म, दुर्योधन आदि सबके श्राद्ध के लिए धन दिया जायगा। इस बात को लेकर भीम दुखी न हों।

ऐसा कहने के बाद युधिष्ठिर ने अर्जुन की बड़ी प्रशंसा की। तब भीम ने अर्जुन की ओर आंखें तरेरकर देखा। इसके बाद युधिष्ठिर ने विदुर जी से कहा–चाचाजी! राजा धृतराष्ट्र को भी भीम पर क्रोध नहीं करना चाहिए। भीम को बारह वर्ष का वनवास, एक वर्ष का अज्ञातवास और इसके लिए अपमानपूर्वक राज्य से निष्कासन आदि दुखों की याद आकर उत्तेजना आ जाती है। वे भी क्षम्य हैं। चाचा विदुर जी! आप राजा धृतराष्ट्र को मेरा संदेश बता दें कि वे जितना धन चाहें, हम देने के लिए तैयार हैं। चाचा विदुर जी ! यह बात आप राजा धृतराष्ट्र से अवश्य कह दें कि भीम अत्यंत दुखी होने के कारण कभी ईर्ष्यावश जो अनुचित बात कह देते हैं, उसे वे मन में न लावें। उन्हें यह भी बता दें कि मेरे तथा अर्जुन के घर में जो कुछ है, वह सब राजा धृतराष्ट्र का है। वे जितना धन दान-पुण्य करना चाहें वह करें। वह सब हम देने के लिए तैयार हैं। चाचा विदुर! राजा धृतराष्ट्र से आप बता दें कि मेरा शरीर और सारा धन उनके अधीन है (अध्याय –)।

विदुर जी ने उपर्युक्त सारी बातें धृतराष्ट्र को बतायीं और यह भी कहा कि युधिष्ठिर तथा अर्जुन ने भीम को समझाकर आपके लिए उनके मन में सौहार्द भाव जगा दिया है। अंततः पांडवों के उदार सहयोग से राजा धृतराष्ट्र ने श्राद्ध तथा दान किया (अध्याय –)।

मीमांसा

ब्राह्मण सांब का यह कहना कि दुर्योधन आदि किसी को दोष न देकर यह समझना चाहिए कि यह भयंकर युद्ध द्वारा महाविनाश एक होनहार तथा भवितव्य था, वर्तमान के लिए उचित है। युधिष्ठिर को राज्य करते हुए पंद्रह वर्ष बीत गये हैं और धृतराष्ट्र गांधारी सहित वनवास को जा रहे हैं। ऐसे अवसर पर मरे हुए लोगों की निंदा करके मन में तथा वातावरण में उत्तेजना फैलाना अनुचित था।

भीम में तामस अधिक है। वे धृतराष्ट्र, दुर्योधन, शकुनि आदि की कुचाल याद कर बौखला जाते हैं जबकि धृतराष्ट्र वन जा रहे हैं और शेष लोग मर चुके हैं। अर्जुन की बात ही उचित है कि साधुजन दूसरे के दोष की याद नहीं करते, अपितु उनके सद्‌गुणों की याद करते हैं। युधिष्ठिर का व्यवहार तो ठीक है ही।

. धृतराष्ट्र, गांधारी, कुंती, विदुर, संजय आदि का वनगमन

कार्तिक की पूर्णिमा थी। धृतराष्ट्र ने पांडवों को बुलाकर उनका अभिनंदन किया और राजभवन से निकलकर सेवकों का धन से सत्कार किया और वन को चल पड़े। युधिष्ठिर भावविह्वल थे। वे फूट-फूटकर रोते हुए कहने लगे– 'महाराज! आप मुझे छोड़कर कहां चले जा रहे हैं?' सहसा वे पृथ्वी पर गिर पड़े। अर्जुन ने उन्हें सम्हाला और कहा–आप ऐसा अधीर न होइए। सभी पांडव, मंत्री व रनिवास की नारियां, प्रजा धृतराष्ट्र के पीछे चल पड़े। चारों तरफ से रोने की आवाज आती थी। पांडवों के वनवास के समय का दुख आज धृतराष्ट्र की वनवास-यात्रा में भी उभड़ आया। एक ब्राह्मण हाथ में अग्नि लेकर चल रहा था। पीछे धृतराष्ट्र गांधारी के कंधे पर हाथ रखकर चल रहे थे और कुंती गांधारी का हाथ पकड़कर चल रही थी। सब लोग सड़क पर आ गये (अध्याय)।

रोते हुए नर-नारियों की आवाज से कोलाहल हो गया। सड़क नर-नारियों से भरी थी। बड़ी कठिनाई से धृतराष्ट्र चलते थे। उनके दोनों हाथ जुड़े थे और उनका शरीर कांप रहा था। उन्होंने वर्धमान नामक द्वार से हस्तिनापुर से निकलकर बाहर का रास्ता पकड़ा और बारंबार आग्रह करके पुरवासियों को वापस लौटाया। विदुर और गवल्गण-पुत्र संजय ने राजा के साथ वन में जाने का निश्चय कर लिया था। धृतराष्ट्र ने कृपाचार्य और युयुत्सु को युधिष्ठिर के

हाथों सौंपकर वापस किया।

जब पुरवासी लौट गये, तब युधिष्ठिर ने अंत:पुर की रानियों को साथ लेकर लौटने का विचार किया। उस समय उन्होंने अपनी माता कुंती से कहा–'मां! आप अपनी पतोहों के साथ लौटने की कृपा करें। मैं राजा के पीछे-पीछे जाऊंगा।' युधिष्ठिर की उक्त बात सुनकर कुंती आंखों में आंसू भरे तथा गांधारी का हाथ पकड़े चलती रहीं।

चलते-चलते कुंती ने कहा–तुम सहदेव पर सदैव प्रसन्न रहना। यह मेरे और तुम्हारे प्रति भक्तिभाव वाला है। तुम कर्ण की सदा याद रखना। मेरी ही दुर्बुद्धि के कारण वह मारा गया। मेरा हृदय कठोर है, जो कर्ण के मर जाने पर भी मैं जीवित हूं। यह मेरा ही दोष है जो तुम लोगों को नहीं बताया कि कर्ण मेरा ही पुत्र है। तुम द्रौपदी तथा अन्य भाइयों नकुल आदि को संतुष्ट रखना। तुम्हारे ऊपर ही इस कुरुकुल का भार है। मैं गांधारी के साथ मैली-कुचैली तपस्विनी बनकर रहूंगी और सासु-ससुर तुल्य गांधारी और राजा धृतराष्ट्र की सेवा में जीवन बिता दूंगी।

माता कुंती का वन जाने का संकल्प जानकर भाइयों सहित युधिष्ठिर बहुत दुखी हुए और उनके मुख से कोई बात नहीं निकल सकी। कुछ सोच-विचारकर युधिष्ठिर ने नम्रता से कहा–माताजी! आपने यह क्या निश्चय कर लिया है? आपको ऐसा नहीं करना चाहिए। मैं आपको वन में जाने की स्वीकृति नहीं दे सकता। आप मेरे ऊपर कृपा करें। जब हम वनवास में जा रहे थे, तब आपने विदुला के द्वारा मुझे क्षत्रिय-धर्म पालन करने का उत्साह दिलाया था। ऐसी स्थिति में आप हमें छोड़कर कैसे जा रही हैं? श्रीकृष्ण के मुख से आपके विचार सुनकर मैंने यह भयंकर नरसंहार करवाया है और राज्य प्राप्त किया है। कहां आपकी पहले वाली बुद्धि और कहां आज का विचार? दोनों में जमीन-आसमान का अंतर है। मुझे क्षत्रिय-धर्म बताकर आपने मुझे युद्ध में झोंक दिया और आज आप तपस्विनी बनकर वन जाना चाहती हैं। मां! आप हम लोगों को, बहुओं को तथा राज्य को छोड़कर वन में कैसे रह सकेंगी? अतएव आप हम पर कृपा करें और घर लौट चलें। युधिष्ठिर के वचन सुनकर कुंती की आंखों से अश्रुधारा झरने लगी, परंतु वे वन की तरफ ही बढ़ती गयीं।

भीम ने कहा–माता जी! जब राज्य-सुख भोगने का समय आया है और राजधर्म-पालन की सुविधा मिली है तब आपकी बुद्धि कैसे उलट गयी है? यदि आपको ऐसा करना था, तो आपने इस भूमण्डल का विनाश क्यों करवाया? जब आपको वन में जाना था तब आप हम पांचों भाइयों को बाल्यकाल में ही वन से

नगर में क्यों लायीं? आप कृपा करें और राजभवन लौट चलें।

कुंती के मन में गांधारी और धृतराष्ट्र की सेवा का दृढ़ निश्चय हो गया था, इसलिए उन्होंने किसी का कुछ नहीं माना। द्रौपदी, सुभद्रादि सब कुंती का निश्चय जानकर दुख से भर गयीं और कुंती के पीछे चलने लगीं (अध्याय)।

कुंती ने कहा–पांडव वीरो! तुम लोगों का घोर तिरस्कार तथा देश-निष्कासन देखकर मैंने विदुला और श्रीकृष्ण द्वारा तुम्हें क्षत्रिय-धर्म का सुझाव दिया था परंतु मैं पुत्र के जीते हुए राज्य का फल नहीं भोगना चाहती। मैं सासु-ससुर तुल्य इन दोनों वनवासियों की सेवा करके शरीर को सुखा डालूंगी। तुम सब राजभवन लौट जाओ (अध्याय)।

पांचों पांडव तथा द्रौपदी आदि नारियां निराश होकर रोने लगीं। धृतराष्ट्र ने स्वयं कुंती से आग्रह किया और गांधारी से कहलवाया कि कुंती राजभवन लौट जायं, परंतु कुंती ने किसी का कहा नहीं माना। वे धृतराष्ट्र तथा गांधारी के साथ वन की तरफ ही चलती रहीं। इससे सब निराश होकर और रो-धोकर लौट गये और कुंती ने वन का रास्ता पकड़ा (अध्याय)।

धृतराष्ट्र प्रथम रात गंगा तट पर रहे और दूसरे दिन वे कुरुक्षेत्र की तरफ चल पड़े। कुरुक्षेत्र के वन में एक राज-ऋषि रहते थे जिनका नाम शतयूप था। वे पहले केकय देश के राजा था। वे अपने पुत्र को राज्य देकर तथा कुरुक्षेत्र वन में आश्रम बनाकर तप करते थे। धृतराष्ट्र उन्हीं के आश्रम पर पहुंचकर तथा उनको साथ लेकर वेदव्यास के आश्रम पर गये। वेदव्यास से वनवास की दीक्षा लेकर शतयूप के आश्रम पर लौट आये। वेदव्यास की आज्ञा से शतयूप ने धृतराष्ट्र को वन में रहने का रंग-ढंग बता दिया। धृतराष्ट्र स्वयं तपस्या में लगे और साथियों को भी उसमें लगाया।

धृतराष्ट्र के शरीर का मांस गल गया। वे दुबले-पतले होकर सिर पर जटा तथा शरीर पर मृगचर्म और वल्कल धारणकर ऋषियों की तरह तपस्या करने लगे। उनके मन का पूरा मोह मिट गया (अध्याय)।

इसके आगे बीस ( )वें अध्याय में एक चुटकुला आता है। बहुत-से ऋषि-महर्षि धृतराष्ट्र के पास पहुंचे। नारद ने अनेक राजाओं को बताया कि वे तप करके इंद्रलोक को जायंगे। शतयूप ने कहा–राजा धृतराष्ट्र अपने तप के फल में किस लोक में जायंगे?

नारद ने कहा–एक दिन मैं सहज ही घूमता-फिरता देवलोक चला गया। वहां मैं इंद्र से मिला। वहीं मैंने राजा पांडु को भी देखा। वहां धृतराष्ट्र की बात चल रही थी। उसी समय मैंने इंद्र के मुख से सुना कि धृतराष्ट्र की आयु की सीमा तीन वर्ष शेष है। वे गांधारी के साथ कुबेर के लोक में जायंगे। वहां कुबेर

से सम्मानित होकर तथा वस्त्राभूषणों से सजधजकर और विमान पर बैठकर इच्छानुसार देव, गंधर्व और राक्षसों के लोक में घूमेंगे। मैंने यह देवताओं का गुप्त विचार कहा है (अध्याय)।

मीमांसा

उक्त अध्याय में नारद द्वारा स्वर्ग का वर्णन तथा धृतराष्ट्र और गांधारी के लिए स्वर्ग-गमन की रोचक बात सब मनोविलास तथा वाक्‌विलास है। नारद ने तपस्विनी कुंती का तो नाम ही नहीं लिया।

. पांडवों का वन में जाकर धृतराष्ट्र आदि से मिलना

धृतराष्ट्र, गांधारी, कुंती आदि जो वन में रह रहे हैं, उनके लिए युधिष्ठिर तथा अन्य लोगों को चिंता होने लगी। सभी पांडव निरंतर चिंता में डूबे रहते थे। वे इतने चिंतित हो गये कि उनको हस्तिनापुर में रहना कठिन हो गया। महाभारत युद्ध में वीरों तथा धन का इतना विनाश हो गया था कि राज्य श्रीहीन हो गया था। इसलिए पांडव शांति नहीं पाते थे। पांडव अभिमन्यु तथा उत्तरा के पुत्र शिशु परीक्षित को देखकर संतोष करते थे (अध्याय)।

युधिष्ठिर ने निर्णय कर ही लिया कि वन में जाकर माता-पिता की खोज-खबर लेना है। सहदेव और द्रौपदी ने भी साथ चलने की इच्छा की। रनिवास तथा सेना सहित युधिष्ठिर वन को चल दिये। वहां जाकर धृतराष्ट्र आदि से मिले। संजय ने वहां के ऋषियों से कुरुवंशी महिलाओं का परिचय कराया।

धृतराष्ट्र ने युधिष्ठिर का कुशल-मंगल पूछा और युधिष्ठिर ने धृतराष्ट्र का। युधिष्ठिर ने पूछा–पिताजी! विदुर कहां हैं? धृतराष्ट्र ने कहा–विदुर उपवासपूर्वक घोर तपस्या में लगे हैं। इन तपस्वी ब्राह्मणों को कभी-कभी विदुर के दर्शन हो जाते हैं। इतनी चर्चा हो ही रही थी कि विदुर दिगंबर रूप में दिखायी दिये। युधिष्ठिर अकेला ही उनके पीछे दौड़े। विदुर एक वृक्ष का सहारा लेकर खड़े हो गये। युधिष्ठिर ने उनके सामने जाकर कहा–'मैं युधिष्ठिर हूं।' विदुर जी युधिष्ठिर को एक निगाह से देखने लगे। देखते-देखते विदुर चेतनाहीन हो गये। उन्होंने वहीं शरीर छोड़ दिया।

धृतराष्ट्र के पास युधिष्ठिर आदि सब बैठे थे। इतने में वेदव्यास आ गये। उन्होंने उनसे कहा–आज तक जो तुम कभी न देखे-सुने होगे, वह आश्चर्यजनक घटना तुम्हें दिखाऊंगा जो चमत्कारी होगी। गांधारी तथा कुंती ने वेदव्यास से

विनय किया कि हमारे मरे हुए पुत्रों का दर्शन करा दें। इसी बीच कुंती ने बताया कि कर्ण मेरे ही पेट से पैदा हुआ मेरा पुत्र था। वेदव्यास ने उन्हें सांत्वना दी। इसके बाद वेदव्यास ने सबसे कहा कि तुम लोग गंगा के तट पर चलो। वहीं मैं तुम लोगों को उन सबके दर्शन करा दूंगा जो युद्ध में मारे गये हैं।

वेदव्यास जी गंगा में घुसकर खड़े हो गये और कौरव-पांडव दलों को बुलाया, तो आकाश से कोलाहल करते हुए दोनों सेनाएं गंगा के पास उतर आयीं। वेदव्यास ने धृतराष्ट्र को उन्हें देखने के लिए दिव्यदृष्टि दी। मरे हुए सभी लोग आकर मिले और एक-दूसरे से राग-द्वेष से रहित होकर प्रेमपूर्वक बातचीत किये। यहां तक के तरुणी स्त्रियां अपने दिवंगत पतियों से गंगा तट पर एक रात राग-रंग करती रहीं। अंततः एक दूसरे से विदा होकर जो स्वर्ग से आये थे, वे सब चले गये।

राजा जनमेजय ने पूछा कि मरे हुए लोग पुनः उसी रूप में कैसे मिल सकते हैं? वेदव्यास के शिष्य वैशंपायन ने कहा—यह पांचभौतिक वर्ग—जड़ प्रकृति नित्य है और इससे भिन्न आत्मा भी नित्य है। आत्मा अमर है। वह देह छूटने पर मरता नहीं है। "जो मनुष्य किसी की देह छूट जाने पर शोक करता है, वह बालक ही है। जो वियोग में दोष मानता है उसे चाहिए कि संयोग का त्यागकर दे। असंग आत्मा में संग नहीं है। जो उसमें संयोग का आरोप करता है, उसी को इस पृथ्वी पर वियोग का दुख सहना पड़ता है।" जो अपने-पराये की मान्यता में उलझा है, वह अभिमान से बाहर नहीं आ सकता। जो पराया नहीं है, मनुष्य उस आत्मा को जानकर विवेक द्वारा मोह से मुक्त हो जाता है।

इसके बाद धृतराष्ट्र ने पांडवों को हस्तिनापुर जाने के लिए राय दी और वे सब चले गये (अध्याय -)।

मीमांसा

जनमेजय का प्रश्न है कि मरे हुए लोग उसी रूप में कैसे पुनः मिल सकते हैं? वैशंपायन का उत्तर जड़-चेतन के आत्मवादी सिद्धांत का प्रतिपादन तो करता है, परंतु इससे जनमेजय के प्रश्न का उत्तर नहीं होता है। वस्तुतः उत्तर है भी नहीं।

. **वियोगे दोषदर्शी यः संयोगं स विसर्जयेत्।**
असंगे संगमो नास्ति दुःखं भुवि वियोगजम् ,

मरे हुए लोगों का उसी रूप में मिलने की बात केवल काल्पनिक है, अतएव सर्वथा असत्य है।

. धृतराष्ट्र, गांधारी तथा कुंती का दावाग्नि में जलकर मर जाना

युधिष्ठिर को धृतराष्ट्र के पास से लौटने के जब दो वर्ष बीते, तब नारद ने हस्तिनापुर आकर युधिष्ठिर को बताया कि धृतराष्ट्र उस समय गंगाद्वार (हरद्वार) में थे। एक दिन जब वे गंगा में स्नान करके वन में पहुंचे तो बड़े जोरों से दावाग्नि लगी। धृतराष्ट्र, गांधारी तथा कुंती तीनों अत्यंत दुर्बल, धृतराष्ट्र अंधे, गांधारी भी आंखों पर पट्टी बांधी; अतएव ये सब भागने में असमर्थ थे। धृतराष्ट्र ने संजय से कहा कि तुम भागकर बच जाओ, अतएव वे भागकर बच गये और धृतराष्ट्र, गांधारी तथा कुंती तीनों प्राणी जलकर मर गये। संजय यह संदेश ऋषियों को देकर हिमालय की तरफ चले गये।

राजा युधिष्ठिर अपने को धिक्कार देकर विलाप करने लगे। सभी पांडव, रानियां तथा नगरवासी रोने-बिलखने लगे। पांडव तथा पुरवासीजन गंगा में जाकर जलांजलि दिये और उनके नाम पर दान-पुण्य आदि किये (अध्याय -)।

सद्गुरवे नमः

महाभारत मीमांसा

सोलहवां : मौसल पर्व

. यादवों का महाविनाश, बलराम तथा श्रीकृष्ण का प्राण त्याग

एक समय विश्वामित्र, कण्व और नारद द्वारका में थे। सारण आदि यादव सांब नामक यादव को स्त्री के वेष में उन ऋषियों के पास ले गये। उन युवक-यादवों ने ऋषियों से पूछा–भगवन! यह स्त्री वभ्रु की पत्नी है। यह गर्भवती है। यह पुत्र पैदा करेगी कि पुत्री?

ऋषि लोग यादव-युवकों का मजाक समझ लिये और क्रोध में कह दिये कि यह यादवों के विनाश के लिए लोहे का मूसल पैदा करेगी। दूसरे दिन प्रातः ही सांब से मूसल पैदा हुआ। मूसल उग्रसेन के सामने पेश किया गया। उन्होंने उसे कुटवाकर तथा उसका चूर्ण बनवाकर उसे समुद्र में फेंकवा दिया।

इसके बाद उग्रसेन, श्रीकृष्ण, बलराम तथा वभ्रु के आदेश से द्वारका में घोषणा की गयी कि आज से पूरे यादव-वंश में शराब बनाना और पीना सर्वथा बंद किया जाता है। यदि कोई इस आदेश का उल्लंघन करेगा तो भाई-बंधु सहित उसको शूली पर चढ़ा दिया जायगा। अतएव द्वारका में यह नियम बन गया कि न मदिरा बनाना है और न पीना है।

यादवगण प्रभास क्षेत्र नामक तीर्थ में उत्सव मनाने गये जो समुद्र के ही पास पड़ता था। यादवों की उन्मादी दशा देखकर उद्धव जी श्रीकृष्ण को प्रणाम कर वहां से चल दिये। प्रभास क्षेत्र में अनेकों बाजे बजने लगे और यादवों का महान मदिरापान आरंभ हुआ। श्रीकृष्ण के पास कृतवर्मा, बलराम, सात्यकि, गद और वभ्रु पीने लगे। मदिरा-निषेध का विधान बनाने वाले ही पीने लगे। मदिरा पीते-

पीते सात्यकि उन्मादी हो गये। उस सभा में ही वे कृतवर्मा का मजाक उड़ाने लगे। उन्होंने कहा–कृतवर्मा! तेरे समान कौन क्षत्रिय होगा जो रात में शिविरों में सोते हुए योद्धाओं को (अश्वत्थामा के सहयोग में) मार डाले। तूने अन्याय किया है। यदुवंशी तुम्हें क्षमा नहीं करेंगे। श्रीकृष्ण के पुत्र प्रद्युम्न ने सात्यकि की बातों का समर्थन करते हुए कृतवर्मा का उपहास किया।

कृतवर्मा बायें हाथ से अंगुलि का संकेत करके सात्यकि का अपमान करते हुए बोले–महाभारत में भूरिश्रवा का हाथ कट गया था और वे युद्ध छोड़कर मरणांत उपवास में बैठे थे। उस दशा में तूने अपनी वीरता दिखाकर उसकी हत्या कर दी। यही तो तेरी बहादुरी है!

कृतवर्मा की उक्त बातें सुनकर श्रीकृष्ण क्रोध में उत्तेजित हो गये। सात्यकि ने कृतवर्मा के अन्य भी अपराध की याद कर तथा श्रीकृष्ण के पास रखी हुई तलवार लेकर कृतवर्मा का सिर काट दिया। इतना ही नहीं, सात्यकि मदिरा के नशा में उन्मत्त होकर तथा घूम-घूमकर अन्य यादवों के भी सिर काटने लगे। श्रीकृष्ण सात्यकि को मारकाट से रोकने के लिए दौड़े, किंतु अन्य यादवों ने सात्यकि को घेर लिया। श्रीकृष्ण यह सब उन्माद देखकर हतप्रभ हो गये। यादव लोग जूठे बरतनों के प्रहार से सात्यकि को मारने लगे। सात्यकि की जान पर जोखिम देखकर उनको बचाने के लिए प्रद्युम्न उस बीच में कूद पड़े। प्रद्युम्न भोज-यादवों से तथा सात्यिक अंधकों से भिड़कर मारामारी करने लगे। विरोधियों की संख्या अधिक होने से सात्यकि और प्रद्युम्न मार डाले गये।

सात्यकि और अपने पुत्र प्रद्युम्न को मरा देखकर श्रीकृष्ण उत्तेजित हो गये और उन्होंने एक मुट्ठी एरका उखाड़ लिया। वह एरका तीव्र शस्त्र बन गया और उसको लेकर जो उनके सामने पड़ा, उन सबको वे मारते गये। उसी मूसल से अंधक, भोज, शिनि, वृष्णिवंशी आदि यादव एक-दूसरे का संहार करने लगे। ब्राह्मणों के शाप का प्रभाव ऐसा था कि मूसल-चूर्ण से पैदा हुई एरका घास को जो कोई उखाड़कर हाथ में लेता, वह वज्र के समान मूसल बन जाता। उन्हीं मूसलों से पूरा यादव वंश आपस में मारामारी करके विनष्ट हो गया। श्रीकृष्ण ने देखा कि उनके पुत्र सांब, चारुदेष्ण तथा प्रद्युम्न और पौत्र अनिरुद्ध मार डाले गये, तब उनका क्रोध प्रचंड हो गया। इतने में देखा कि उनका छोटा भाई गद भी मार डाला गया, तब कृष्ण ने अत्यंत कुपित हो बचे हुए यादवों को मार डाला।

इस घोर मारामारी में जब यादवों का नाश हो गया, तब योद्धा वभ्रु और श्रीकृष्ण का रथ हांकने वाले दारुक ने श्रीकृष्ण से कहा–भगवन! अब सबका विनाश हो गया है। अधिकतम यादव तो आपके हाथों मारे गये हैं–*भगवन्*

निहताः सर्वे त्वया भूयिष्ठशो नराः (,)। अब बलराम जी का पता लगाइये। अब हम तीनों उनकी खोज करें।

श्रीकृष्ण, वभ्रु तथा दारुक बलरामजी को खोजते हुए चले, तो देखा कि वे–*वृक्षे स्थितं चिंतयानं विविक्ते* (,)–एक वृक्ष के नीचे एकांत में बैठे चिंतन कर रहे थे।

श्रीकृष्ण ने तुरंत दारुक से कहा कि तुम हस्तिनापुर जाकर अर्जुन को बताओ कि यादवों का महा संहार हो गया है। अर्जुन शीघ्र ही द्वारका आ जायं और स्त्रियों को सम्हाल लें। दारुक ने हस्तिनापुर की तरफ रथ हांक दिया। श्रीकृष्ण ने वभ्रु को कहा कि आप स्त्रियों की रक्षा के लिए द्वारका चले जाइये। ऐसा न हो कि धन के लालच में पड़कर डाकू स्त्रियों की हत्या कर दें।

श्रीकृष्ण की आज्ञा से वभ्रु वहां से द्वारका को चल दिये, परंतु तुरंत एक मूसल उनके ऊपर आ गिरा और वे वहीं ढेर हो गये। वभ्रु की मृत्यु देखकर श्रीकृष्ण ने बलराम से कहा–भैया! आप यहीं रहकर मेरी प्रतीक्षा करें। मैं द्वारका जाकर स्त्रियों की सुरक्षा का कुछ प्रबंध कर आऊं।

श्रीकृष्ण द्वारका पहुंचकर अपने पिता वसुदेव से बोले–पिताजी! आप यादवों की स्त्रियों की तब तक रक्षा करें जब तक यहां अर्जुन न आ जायं। मुझे अभी तत्काल बलराम के पास जाना है। वे मेरी प्रतीक्षा में बैठे हैं। मैंने पहले कौरवों का विनाश देखा और आज यादवों का विनाश देखा। अब मैं द्वारका को नहीं देखता रह सकता। मैं वन में जाकर बलराम के साथ तपस्या करूंगा। इतना कहकर श्रीकृष्ण अपने पिताश्री का चरण स्पर्श कर चल दिये।

श्रीकृष्ण ने स्त्रियों का करुण-क्रंदन सुना तो वे लौटकर उनके पास गये और उन्हें सांत्वना दिये और इतना कहकर वे चल दिये कि अर्जुन आकर तुम्हें संकट से बचायेंगे।

श्रीकृष्ण बलराम के पास पहुंचे। उनके देखते-देखते बलराम ने अपने प्राण त्याग दिये। श्रीकृष्ण इस महा विनाश का चिंतन करते हुए वन में विचरने लगे। उन्हें गांधारी की बात याद आयी। कौरव-विनाश के बाद गांधारी ने कहा था–कृष्ण! तूने कौरवों का नाश करवाया है, तेरा यदुकुल भी इस तरह गृहयुद्ध करके विनष्ट होगा। श्रीकृष्ण सोचते-विचारते तथा मन को एकाग्र करके पृथ्वी पर लेट गये।

इसी समय जरा नाम का व्याध शिकार में उधर आया था। उसे दूर से लेटे हुए कृष्ण को देखकर मृग होने का भ्रम हुआ और उसने उन पर बाण चला दिया। जब अपना शिकार लेने निकट आया तब उसने घायल कृष्ण को देखा।

उसे दुख हुआ। मन-ही-मन भयभीत होकर श्रीकृष्ण के पैर पकड़ लिए। श्रीकृष्ण ने उसे सांत्वना दी और अपने प्राण त्याग दिये (अध्याय –)।

मीमांसा

पौराणिक कहानियों में चमत्कारी बातें भर जाती हैं। यादव युवकों ने प्रमादवश श्रीकृष्ण के पुत्र सांब को स्त्री-वेष पहनाकर तथा उसे ऋषियों के सामने ले जाकर मजाक किया कि इस स्त्री को क्या पैदा होगा, तो क्या ऋषि क्रोध में इतना बौखला जायं कि वे यादव-वंश का विनाश ही सोच लें? यह ऋषियों का कौन-सा संयम है?

क्या किसी के शाप दे देने से किसी युवक के पेट से दूसरे दिन लोहे का मूसल पैदा हो सकता है? यह बिलकुल मनोरंजन मात्र है। क्या लोह-मूसल का चूर्ण एरका घास बन सकता है और क्या घास लोह-मूसल या वज्र जैसा शस्त्र बन सकती है? ये सारी बातें बालकों की कहानी जैसी असंभव-दोषयुक्त हैं।

ब्राह्मणों ने पौराणिक गाथाओं में लोगों को यह कहकर बहुत धमकाया है कि ब्राह्मण का शाप लोगों को खा जाता है। वर-शाप का हौआ खड़ाकर समाज के लोगों के मन को विकृत किया गया है। किसी के वर-शाप हमारा कुछ नहीं कर सकते। हमारे भले-बुरे कर्म हमारे लिए वर-शाप बन जाते हैं।

वस्तुतः बात ऐसी थी कि श्रीकृष्ण का जन्म ही मामा कंस के कारागार में हुआ था। उन्हें थोड़े दिनों में कंस को मारना पड़ा था। इसके बाद तो मारामारी का क्रम ऐसा चला कि श्रीकृष्ण का जीवन उसी में बीता। निश्चित है कि उन्होंने अनेक आततायी राजाओं को मारा और मरवाया। इसके लिए अपने यादव-वंश को लड़ाकू बनाया। जीवन भर लड़ते-लड़ते यादवों को लड़ाई की आदत हो गयी। अब बाहर की सारी लड़ाइयां समाप्त हो गयीं। परिवार के लोगों में लड़ने की आदत है। अब वे कहां लड़ें? अब रहा परिवार, तो वे उसी में लड़कर मर गये।

निश्चित है, जो अपने परिवार, समाज, कंपनी, पार्टी तथा संस्था के सदस्यों को दूसरे से लड़ना सिखायेगा, वे पहले दूसरे से लड़ेंगे और पीछे आपस में लड़कर नष्ट होंगे। इसलिए लड़ने-लड़ाने की आदत छोड़कर समता से रहने की आदत बनाना चाहिए।

दैवी कल्पना और चमत्कार केवल कवि-कल्पना है जो मिथ्या महिमा फैलाकर तथा मनुष्य के शुद्ध विवेक पर परदा डालकर उसे मूढ़ बनाती है, और इसके पीछे उसका सब प्रकार से शोषण होता है।

. यादववंश की स्त्रियों, बूढ़ों, बच्चों को लेकर अर्जुन का द्वारका से प्रस्थान

दारुक ने जाकर पांडवों को बताया कि मूसल-युद्ध में पूरा यादव-वंश का विनाश हो गया। यह दुखद समाचार सुनकर पांडव शोक में डूब गये और अर्जुन भाइयों से पूछकर मामा वसुदेव से मिलने के लिए द्वारका चल दिये। द्वारका पहुंचकर अर्जुन ने देखा कि द्वारका विधवा स्त्री के समान श्रीहीन हो गयी है। अर्जुन को देखकर स्त्रियां करुण स्वर में रो पड़ीं। अर्जुन स्त्रियों की दुर्दशा देखकर शोक-पीड़ित हो गये और फूट-फूटकर रो पड़े तथा मूर्च्छित होकर गिर पड़े। सत्यभामा, रुक्मिणी आदि रानियां अर्जुन को घेरकर फूट-फूटकर रोने लगीं। अंततः स्त्रियों ने अर्जुन को उठाकर चौकी पर बैठाया और स्वयं उनको घेरकर बैठ गयीं। अर्जुन जब स्वस्थ हुए तब स्त्रियों को सांत्वना देकर मामा वसुदेव से मिलने चले गये।

मामा के महल में पहुंचकर अर्जुन ने देखा कि मामा वसुदेव शोक से विह्वल होकर पृथ्वी पर पड़े हैं। उन्होंने आंसू बहाते हुए वसुदेव के पैर पकड़ लिए। बूढ़े वसुदेव ने अर्जुन को खींचकर छाती से लगा लिया और पुत्रों, पौत्रों तथा दौहित्रों की याद कर फूट-फूटकर रो पड़े।

वसुदेव ने कहा—अर्जुन! जिन यादवों ने सैकड़ों दैत्यों तथा राजाओं पर विजय पायी थी, वे सब-के-सब काल के गाल में समा गये। वे आज द्वारका में नहीं हैं। मैं उन्हें आज नहीं देख पा रहा हूं, तो भी मेरे प्राण नहीं निकल रहे हैं। मेरे लिए मृत्यु दुर्लभ बनी हुई है। अर्जुन! जो तुम्हारे प्रिय शिष्य थे, जिनका तुम बहुत सम्मान करते थे, वे ही सात्यकि और प्रद्युम्न यादवों के विनाश के कारण बने। इतने शूरवीर कृष्ण ने जब अपने परिवार के लोगों की उद्दंडता देखी, तब उन्होंने उनकी उपेक्षा कर दी। अर्जुन! श्रीकृष्ण बहुत शक्तिशाली थे, किंतु उन्होंने भाई-बंधुओं को बचाने की इच्छा नहीं की। जब पूरा यादव-परिवार परस्पर कटकर मर गया, तब कृष्ण ने आकर मुझसे कहा—अर्जुन आने वाले हैं, आप उनसे यादव-वंश के विनाश का हाल बता दीजिएगा। कृष्ण ने कहा था कि मैं शौच-संतोषादि नियमों का पालन करते हुए बलराम के साथ काल की प्रतीक्षा करूंगा। अर्जुन! यादव-विनाश तथा कृष्ण एवं बलराम की मृत्यु से मैं शोक-

संतप्त होकर गलता जा रहा हूं। अब मैं न भोजन करूंगा और न जीवन को रखूंगा। सौभाग्य से तुम आ गये हो। कृष्ण ने जो कुछ कहा है वह करो। यह राज्य, ये स्त्रियां तथा ये रत्न तुम्हारे अधीन हैं। अब मैं निश्ंचित होकर शरीर का त्याग करूंगा (अध्याय –)।

वसुदेव की उक्त बातें सुनकर अर्जुन बहुत दुखी हुए। उन्होंने वसुदेव से कहा–मामाजी! श्रीकृष्ण तथा अपने भाइयों से रहित यह पृथ्वी मुझसे अधिक समय तक देखी नहीं जा सकती। हम पांचों भाई तथा द्रौपदी एक हृदय के हैं। अतएव अब इनमें कोई भी इस संसार में रहना नहीं चाहेगा। अब मैं यादवों की स्त्रियों, बालकों और बूढ़ों को अपने साथ ले जाकर इंद्रप्रस्थ पहुंचाऊंगा।

अर्जुन ने वसुदेव से उक्त बातें कहकर दारुक से कहा कि अब मैं यादव-वंश के मंत्रियों से मिलना चाहता हूं। अर्जुन सुधर्मा नामक सभाभवन में पहुंचे। वहां मंत्रियों तथा विद्वान ब्राह्मणों से मिलना हुआ। सब पर दीनता छायी थी। सब किंकर्तव्यविमूढ़ थे। अर्जुन की दशा सबसे दयनीय थी। अर्जुन ने सभा में कहा–मंत्रियो! अब मैं यादव-वंश के बूढ़ों, बच्चों तथा स्त्रियों को अपने साथ इंद्रप्रस्थ ले जाऊंगा। द्वारका समुद्र के पेट में जा रहा है। यहां सुरक्षा नहीं है। आज से सातवें दिन मुझे प्रात:काल यहां से प्रस्थान करना है। अतएव आप लोग सावधान हो जाइये।

अर्जुन की उक्त बातें सुनकर सब प्रस्थान के लिए तैयारी करने लगे। उस रात को अर्जुन ने श्रीकृष्ण के महल में ही विश्राम किया। उसके अगले दिन वसुदेव ने शरीर का त्याग कर दिया। वसुदेव के महल में कुहराम मच गया। वसुदेव का राजकीय ढंग से अंत्येष्टि संस्कार कराया गया।

इसके बाद अर्जुन वहां गये जहां यादवों का संहार हुआ था। अर्जुन को उस दारुण नर-संहार के स्थान को देखकर बड़ा दुख हुआ। उन्होंने श्रीकृष्ण और बलराम के शव को खोजकर उनका भी दाह-संस्कार कराया। सभी मृतकों का प्रेतकर्म करके सातवें दिन अर्जुन यादव-वंश के बचे हुए लोगों को जिनमें स्त्री, बूढ़े और बच्चे अधिक थे, लेकर द्वारका से चल दिये। घोड़े, बैल, गधे तथा ऊंटों से जुते हुए रथों पर पूरा काफिला चला। लोगों के मुख से निकल रहा था 'कालचक्र बड़ा विचित्र है।' नदियों, वनों, पर्वतों को लांघते हुए तथा नदियों के तटों पर पड़ाव डालते हुए यह काफिला बढ़ रहा था।

पंचनद (पंजाब) के पास पहुंचकर वहां पड़ाव पड़ा जो पशु तथा धन-धान्य से संपन्न था। केवल एक अर्जुन के संरक्षण में ले जायी जाती हुई बहुसंख्यक स्त्रियों को देखकर वहां के लुटेरों के मन में लोभ-मोह हो गया।

अतएव वहां के आभीरों का दल लाठी लेकर हजारों की संख्या में अर्जुन के काफिला पर टूट पड़ा।

अर्जुन ने उन्हें डांटा तथा उनसे लड़ना चाहा, परंतु सफल न हो सके। मालटाल तो लुट ही गया, स्त्रियों को वे खींच-खींचकर ले जाने लगे। कितनी स्त्रियां भयवश स्वयं उनके साथ चली गयीं। डाकुओं ने यादव वंश की सुंदरी स्त्रियों को लूट लिया। अर्जुन इस संताप से बहुत दुखी हुए। अर्जुन का शस्त्र-ज्ञान तथा भुजाओं का बल समाप्तप्राय था। उन्होंने दुखी होकर कहा–'यह अस्त्र-शस्त्र का ज्ञान कुछ भी नित्य नहीं है।' फिर बची-खुची स्त्रियां तथा धन लेकर अर्जुन कुरुक्षेत्र पहुंचे और वे उन स्त्रियों, बूढ़ों, बच्चों को जहां-तहां बसा दिये। इसके बाद अर्जुन वेदव्यास के आश्रम पर गये और उनके दर्शन किये (अध्याय)।

अर्जुन दुखी थे। वेदव्यास ने पूछा कि तुम दुखी क्यों हो? अर्जुन ने यादवों का विनाश तथा बलराम और श्रीकृष्ण की मृत्यु की बात बतायी। उन्होंने बताया कि किस तरह यादव प्रमादी बनकर आपस में कट मरे और स्त्री, बूढ़ों, बच्चों को लेकर इंद्रप्रस्थ के लिए जब मैं चला तब रास्ते के लुटेरों ने किस तरह मेरे काफिला को लूट लिया, सुंदरी स्त्रियों को छीन ले गये। अब न मेरा पहले जैसा अस्त्र-शस्त्र ज्ञान रहा और न मेरी भुजाओं में बल रहा। जो श्रीकृष्ण मेरा सहारा थे, उनको मैं आज नहीं देख पा रहा हूं। मुझे चक्कर आ रहा है। मेरे मन में दुख समा गया है। मुझे शांति नहीं मिल रही है। मैं कृष्ण के अभाव में जीना नहीं चाहता।

अर्जुन ने और कहा–कृष्ण चले गये। यादव नष्ट हो गये। मेरे जाति-भाई छत्तीस वर्ष पहले कट मरे। अब मेरा बल भी नष्ट हो गया है। मैं हृदय-शून्य होकर इधर-उधर दौड़ लगा रहा हूं। महर्षे! मुझे बताइये, मेरा कल्याण कैसे होगा?

वेदव्यास ने कहा–जब ऊंचा उठने का समय आता है, तब मनुष्य की बुद्धि, तेज और ज्ञान का विकास होता है; और जब पतन का समय आता है तब सब कुछ उलटा हो जाता है। काल ही सारी सृष्टि का कारण है। काल पाकर उन्नति और पतन होता है। बलवान मनुष्य दुर्बल हो जाता है और दुर्बल बलवान हो जाता है। बलवान व्यक्ति काल के उलटफेर से अपनी जीविका के लिए दूसरे का सेवक हो जाता है।

अर्जुन ने युधिष्ठिर से मिलकर यादवों की रामकहानी कह सुनायी तथा बलराम और श्रीकृष्ण की मृत्यु का भी वृत्तांत बताया (अध्याय)।

महाभारत मीमांसा : सोलहवां–मौसल पर्व

सद्‌गुरवे नमः

महाभारत मीमांसा

सत्तरहवां : महाप्रस्थानिक पर्व

. द्रौपदी सहित पांडवों का महाप्रस्थान

यादव वंश का विनाश हो गया। युधिष्ठिर का मन उदास हो गया। उन्होंने महाप्रस्थान का निश्चय कर लिया। उन्होंने अर्जुन से कहा–"हे महामते! काल सभी देहधारियों को पका रहा है। अब मैं काल के बंधन को स्वीकारता हूं। तुम भी इसको समझो।" अर्जुन ने कहा– *'कालः काल इति ब्रुवन'* काल तो काल ही है, उसे टाला नहीं जा सकता। अन्य पांडवों ने उक्त बात का समर्थन किया।

युधिष्ठिर ने युयुत्सु को संपूर्ण राजकाज का भार सौंप दिया और राजगद्दी पर अपने भतीजे अभिमन्यु के पुत्र कुमार परीक्षित को बैठाकर उनका राजतिलक कर दिया। उन्होंने दुखित होकर सुभद्रा से कहा–बेटी! यह तुम्हारे पुत्र का पुत्र कुरुदेश का राजा होगा। यह हस्तिनापुर में राज्य करेगा, और यादवों में बचा हुआ लड़का श्रीकृष्ण का पौत्र वज्र इंद्रप्रस्थ में राज्य करेगा। तुम्हें परीक्षित और वज्र दोनों की रक्षा करना चाहिए। सावधान रहना, अपना मन अधर्म की ओर न जाय।

इसके बाद युधिष्ठिर ने भाइयों सहित वसुदेव, बलराम तथा कृष्ण के लिए जलांजलि दी और इन सबके नाम से श्राद्ध किया और ब्राह्मणों को खूब स्वादिष्ट भोजन करवाया और उन्हें रत्न, वस्त्र, ग्राम, घोड़े, रथ आदि दिया। इतना ही

. कालः पचति भूतानि सर्वाण्येव महामते।
कालपाशमहं मन्ये त्वमपि द्रष्टुमर्हसि

. युयुत्सु धृतराष्ट्र के द्वारा एक वैश्यकुल की स्त्री के गर्भ से पैदा किये गये थे। यह स्त्री धृतराष्ट्र की सेवा में रहती थी।

नहीं, बहुत-से ब्राह्मणों को लाखों स्त्रियां दीं–*स्त्रियश्च शतसहस्रशः*। इसके बाद उन्होंने गुरुवर कृपाचार्य की पूजा की और पुरवासियों सहित परीक्षित को शिष्य भाव से उनकी सेवा में समर्पित कर दिया। उन्होंने मंत्रियों को भी बुलाकर उनको उत्तम सीख दी और अपना विचार भी कह सुनाया।

प्रजा ने युधिष्ठिर के महाप्रस्थानिक प्रस्ताव को नहीं स्वीकारा और कहा– आप ऐसा न करें, हमें छोड़कर न जायं। किंतु युधिष्ठिर ने प्रजा का आग्रह नहीं माना। उन्होंने सबको समझा-बुझाकर उनसे अनुमति ले ली और महाप्रस्थान का निर्णय ले लिया।

इसके बाद युधिष्ठिर ने अपने शरीर से सारे आभूषण उतारकर वल्कल वस्त्र धारणकर लिया। भीम, अर्जुन, नकुल, सहदेव तथा द्रौपदी ने भी अपने वस्त्राभूषण उतारकर वल्कल पहन लिये। फिर ब्राह्मणों से त्यागकालिक कर्मकांड करवाकर यज्ञ संबंधी अग्नियों को जल में विसर्जित कर दिया। इसके बाद द्रौपदी सहित पांचों पांडव नगर छोड़कर चल दिये।

पहले जुए में हारकर द्रौपदी सहित पांडव वन गये थे। आज महाप्रस्थान के उद्देश्य से ये छहों नगर से निकले। स्त्रियां रोने लगीं, परंतु पांडवों को प्रसन्नता थी। पांडवों के साथ एक कुत्ता भी चला। नगर से निकलने पर नगरवासी उन्हें दूर तक भेजने गये, परंतु कोई उनसे यह नहीं कहा कि आप लौट चलें। धीरे-धीरे सब पुरवासी पांडव को विदा कर लौट आये।

नागकन्या उलूपी जो अर्जुन की एक पत्नी थी, उसने अपने आप को गंगा में डुबा दिया। पांडव अनेक देशों, नदियों, नगरों को पारकर लालसागर के पास जा पहुंचे। अर्जुन ने वहां पर अपने गांडीव धनुष तथा तरकशों को पानी में फेंक दिया। वहां से वे दक्षिण चले। इसके बाद खारे समुद्र के पास पहुंचे और दक्षिण-पश्चिम की ओर चले और द्वारका पहुंचे जो समुद्र में डूब चुकी थी (अध्याय)।

इसके बाद पांडव उत्तर दिशा की ओर चलकर हिमालय में पहुंचे। सब चल ही रहे थे, कि द्रौपदी गिरकर मर गयीं। इसके बाद सहदेव, नकुल, अर्जुन तथा भीम भी गिरकर मर गये। चलते-चलते स्वर्ग पहुंचने के पहले इन लोगों के गिरने का युधिष्ठिर ने कारण बताया–द्रौपदी का अर्जुन के प्रति पक्षपात; सहदेव का अपनी विद्या-बुद्धि का घमंड; नकुल को अपने सौंदर्य का अभिमान; अर्जुन का युद्ध-निपुणता का घमंड और भीम का खब्बू और घमंडी स्वभाव। इन दोषों से ये सब मार्ग में ही गिरकर मर गये (अध्याय)।

अब रह गये युधिष्ठिर और उनके साथ उनका अनुगामी कुत्ता। इतने में स्वर्ग से देवराज इंद्र धड़धड़ाते हुए रथ लेकर आ गये और उन्होंने युधिष्ठिर का

स्वागत किया और निवेदन किया कि आप रथ पर बैठें और स्वर्ग चलें। युधिष्ठिर ने कहा–मार्ग में पीछे हमारे भाई गिर पड़े हैं। उनको भी स्वर्ग ले चलने की व्यवस्था कीजिए। मैं भाइयों के बिना स्वर्ग नहीं जाना चाहता। द्रौपदी भी मार्ग में गिर पड़ी है, उसे भी ले चलने का प्रबंध कीजिए।

इंद्र ने कहा–आपके भाई तथा द्रौपदी स्वर्ग में पहुंच चुके हैं। जब आप वहां पहुंचेंगे तब वे आपको मिलेंगे। वे मानव-शरीर छोड़कर स्वर्ग गये हैं, परंतु आप इसी शरीर से स्वर्ग पधारें।

युधिष्ठिर ने कहा–देवराज! यह कुत्ता भी मेरे साथ है। यह मेरा बड़ा भक्त है। इसने सदैव मेरा साथ दिया है, अतएव इसे भी आप स्वर्ग ले चलें। मैं इसे छोड़ नहीं सकता; क्योंकि मैं निष्ठुर नहीं हूं। इंद्र ने बहुत समझाया कि कुत्ता जैसा अपावन प्राणी स्वर्ग में नहीं जा सकता, किंतु धृतराष्ट्र ने धुच्च बांध ली कि इस कुत्ते को छोड़कर मैं स्वर्ग नहीं जा सकता।

इंद्र ने यह भी कहा कि आखिर आप द्रौपदी तथा अन्य चार भाइयों को तो रास्ते में छोड़कर ही आये हैं, तो इस कुत्ते को छोड़ने में क्या परेशानी है? युधिष्ठिर ने कहा–द्रौपदी तथा अन्य भाई गिरकर मर गये थे, तब मैं क्या करता? उनको जीवित करना तो मेरे वश की बात नहीं थी। कुत्ता जीवित और साथ है। मैं इसके बिना स्वर्ग नहीं जा सकता।

इतने में कुत्ता ने अपना स्वरूप प्रकट किया। वस्तुतः वह धर्म था। उसने युधिष्ठिर के धर्म की परीक्षा लेने के लिए कुत्ता का रूप धारण किया था। धर्म ने कहा–मैंने तुम्हारी परीक्षा तुम्हारे वनवास के समय ली थी जब तुम द्वैतवन में निवास कर रहे थे। तुम्हारे सभी भाई पानी लाने के प्रयास में मारे गये थे। उस समय तुमने कुंती और माद्री की समानता रखकर अपने सगे भाई भीम और अर्जुन को छोड़कर नकुल को जीवित करना चाहा था। इस समय तुमने एक कुत्ते के लिए स्वर्ग-त्याग का आदर्श दिखाया, इसलिए स्वर्ग के अधिकारियों में तुम सर्वोच्च हो।

अंततः इंद्र युधिष्ठिर को सदेह स्वर्ग में ले गये, परंतु वहां अन्य भाई तथा द्रौपदी नहीं दिखी। इसलिए उन्होंने कहा–मैं यहां नहीं रह सकता। मैं वहीं जाना चाहता हूं जहां मेरे अन्य चारों भाई तथा द्रौपदी हैं।

मीमांसा

उपर्युक्त पूरी कथा पौराणिकता से रंगी है। अतिशयोक्तियां तो हैं ही। युधिष्ठिर लाखों स्त्रियां ब्राह्मणों को दान देते हैं, मानो स्त्रियां सिक्के हैं जिन्हें ढालकर वितरित किया जा रहा है।

कथा का सार इतना ही है कि यादवों का विनाश देखकर पांडवों को राजकाज से वितृष्णा हुई और वे युयुत्सु के जिम्मे राज्य और परीक्षित को छोड़कर पहले द्वारका गये, फिर हिमालय में जाकर शरीर छोड़े। शरीर छोड़ने को ही भारतीय भाषा में स्वर्गवास कहा जाता है। आकाश में कहीं न स्वर्ग है और न इंद्र। मन की पवित्रता ही स्वर्ग है और जीव ही इंद्र है जो इंद्रियों का प्रेरक है। वैदिक दृष्टि से इंद्र के तीन अर्थ हैं। आधिदैविक अर्थ है प्रकृति-शक्ति, आधिभौतिक अर्थ है बलवान राजा और आध्यात्मिक अर्थ है जीव। इंद्रियों का प्रेरक जीव इंद्र है।

सद्‌गुरवे नमः

महाभारत मीमांसा

अठारहवां : स्वर्गारोहण पर्व

. कौरव–पांडव का स्वर्गवास

युधिष्ठिर ने स्वर्ग में पहुंचकर देखा कि दुर्योधन तेजोमय सिंहासन पर विराजमान हैं और उनकी सेवा में लोग खड़े हैं। दुर्योधन का वैभव देखकर युधिष्ठिर को अमर्ष एवं क्रोध हुआ। उनका मन ईर्ष्या से भर गया और उन्होंने चिल्लाकर कहा–ओ देवताओ! हमारे भाई–बंधु कहां हैं? मैं दुर्योधन को देखना भी नहीं चाहता हूं। मैं तो वहीं रहना चाहता हूं जहां मेरे भाई तथा द्रौपदी हैं।

नारदजी ने हंसते हुए कहा–युधिष्ठिर! तुम्हें दुर्योधन के लिए ऐसा कटु वचन नहीं कहना चाहिए। राजा दुर्योधन देवताओं सहित उन नरेशों से भी सम्मानित हैं जो बहुत समय से स्वर्ग में निवास करते हैं। दुर्योधन ने भय के समय भी भय नहीं किया है। उसने तुम सबसे डटकर युद्ध किया है। उसने अपने क्षत्रिय–धर्म के अनुसार उच्च गति पायी है। युधिष्ठिर! जुए में जो अपराध हुआ है या और पहले की बातें तुम्हें अपने मन में नहीं लाना चाहिए। तुम्हें पहले की सारी बातें भुला देना चाहिए। तुम्हें पुरानी भली–बुरी बातों की आज याद करना उचित नहीं है। तुम दुर्योधन से प्रेमपूर्वक मिलो। यहां स्वर्ग में पहले के वैर–विरोध नहीं रहते हैं।

युधिष्ठिर ने कहा–मैं अपने भाई–बंधुओं को देखना चाहता हूं। देवता युधिष्ठिर को नरक की तरफ ले गये जहां चारों तरफ रक्त–मांस का कीचड़ था, सड़े मुरदे थे और गरम लोहे तथा खौलते तेल का स्पर्श कराकर पापियों को यातना दी जा रही थी। युधिष्ठिर वहां की बदबू तथा पीड़ा से घबरा गये। वहां चारों तरफ रोने की आवाज आ रही थी।

युधिष्ठिर के पूछने पर कि तुम कौन हो, रोने वालों से उत्तर मिला मैं कर्ण

हूं, मैं भीम हूं, मैं अर्जुन हूं, मैं नकुल हूं, मैं सहदेव हूं, मैं धृष्टद्युम्न हूं, मैं द्रौपदी हूं इत्यादि। युधिष्ठिर ने सोचा कि दैव का अद्भुत विधान है। उन्होंने सोचा कि मैं भ्रम में हूं कि सपना देख रहा हूं? युधिष्ठिर व्याकुल हो गये।

इंद्र आये और उन्होंने युधिष्ठिर से कहा–"*अवश्यं नरकस्तात द्रष्टव्यः सर्वराजभिः* (अध्याय , श्लोक) तात! सभी राजाओं को नरक देखना पड़ता है।" तुमने द्रोणाचार्य को झूठ बोलकर उनके साथ छल किया था और इसी से वे मारे गये, इसलिए तुम्हें भी नरक देखना पड़ा।

इसके बाद इंद्र ने युधिष्ठिर आदि सभी पांडवों को स्वर्ग में स्थान दिया। फिर तो युधिष्ठिर ने अपने भाइयों, बंधु-बांधवों तथा द्रौपदी से भी भेंट की।

फिर बताया गया कि वे सभी लोग अपने मूल स्वरूप में स्थित हो गये। श्रीकृष्ण की सोलह हजार स्त्रियां सरस्वती नदी में कूदकर अपने प्राण खो दीं (,)। इसके बाद वे स्वर्ग में अप्सराएं होकर श्रीकृष्ण के पास पहुंच गयीं।

अंततः कौरव-पांडव तथा दोनों पक्ष के लोग उत्तम स्वर्ग में पहुंच गये।

वैशंपायन कहते हैं–हे महातेजस्वी भरतवंशी जनमेजय! कौरव और पांडवों की सारी कथाएं, तुम्हें विस्तार के साथ मैंने सुनायी।" यथा–

एतत् ते सर्वमाख्यातं विस्तरेण महाद्युते।
कुरूणां चरितं कृतस्नं पांडवानां च भारत

(महाभारत, स्वर्गारोहण पर्व, अध्याय , श्लोक)

मीमांसा

नारद ने युधिष्ठिर से कहा–"स्वर्ग में वैर-विरोध नहीं रहते। यहां ईर्ष्या नहीं की जाती।" इसका अर्थ यही है कि जिसके मन में किसी प्राणी से वैर-विरोध तथा ईर्ष्या नहीं है, उसका निर्मल मन ही उसके लिए स्वर्ग है।

ऊपर जो स्वर्ग-नरक का दृश्य दिखाया गया है वह केवल कवि-कल्पना है। द्रौपदी सहित पांचों पांडव हिमालय में रहकर अपने शरीर छोड़ दिये। जीव के अपने बनाये शुभाशुभ कर्म उसके साथ रहते हैं। उसको उनके फल आगे देह धरकर भोगने पड़ते हैं। जिसने इसी जीवन में सारे कर्म-संस्कार ज्ञानाग्नि में दग्ध कर दिया, वह आज ही मुक्त है। जब उसकी देह छूट गयी तब वह सदा के लिए मुक्त हो गया।

. यहां महाभारत पूरा हुआ

सांख्य-योग के विद्वान पवित्र हृदय वेदव्यास जी ने इस इतिहास महाकाव्य की रचना की है। कृष्ण द्वैपायन वेदव्यास का लिखा यह महाभारत काव्य 'कार्ष्ण वेद' है। कृष्ण द्वैपायन का लिखा होने से इसे 'कार्ष्णवेद' कहा जाता है। अठारह पुराण, संपूर्ण धर्मशास्त्र तथा छहों अंगों सहित चारों वेद एक ओर रखा जाय तो महाभारत अकेला ही उसके बराबर है। प्रभु वेदव्यास कृष्ण द्वैपायन ने इसको तीन वर्षों में लिखकर पूर्ण किया–"त्रिभिर्वर्षैरिदं पूर्णं कृष्णद्वैपायनः प्रभुः (,)।"

जो महाभारत की कथा सुनता है, उसके ब्रह्महत्या आदि के करोड़ों पाप नष्ट हो जाते हैं। मनुष्य दिन भर में जितना पाप करता है, सायंकाल में महाभारत का पाठ करने से वह उनसे छूट जाता है। "ब्राह्मण रात में स्त्रियों के समूह से घिरकर जो पाप करता है, उससे वह प्रातःकाल की संध्योपासना के समय महाभारत का पाठ करने से छूट जाता है।"

"मनुष्य इस संसार में हजारों माता-पिताओं तथा सैकड़ों स्त्री-पुत्रों के संयोग-वियोग का अनुभव कर चुके हैं, करते हैं और करते रहेंगे। उनमें हजारों हर्ष के स्थान आते हैं और सैकड़ों भय के स्थान आते हैं। मूर्ख मनुष्य दिन-ब-दिन उनमें आंदोलित रहते हैं, परंतु विवेकवान उसके द्वंद्व से परे रहते हैं।

"मैं दोनों हाथ ऊपर उठाकर पुकारकर कह रहा हूं, परंतु मेरी बात कोई सुनता नहीं है। धर्म से (मोक्ष तो प्राप्त ही होता है) अर्थ और काम भी सफल होते हैं। फिर धर्म का सेवन लोग क्यों नहीं करते? कामना से, भय से, लोभ से, तथा प्राण बचाने के लिए भी धर्म का त्याग न करे। धर्म नित्य है, सुख-दुख अनित्य हैं। इसी प्रकार जीव नित्य है और उसके बंधनों का कारण माया अनित्य है।" यथा–

मातापितृसहस्राणि पुत्रदारशतानि च।
संसारेष्वनुभूतानि यान्ति यास्यन्ति चापरे
हर्षस्थानसहस्राणि भयस्थानशतानि च।
दिवसे दिवसे मूढमाविशन्ति न पण्डितम्
ऊर्ध्वबाहुर्विरौम्येष न च कश्चिच्छृणोति मे।
धर्मादर्थश्च कामश्च स किमर्थं न सेव्यते

. यद् रात्रौ कुरुते पापं ब्राह्मणः स्त्रीगणैर्वृतः।
महाभारतमाख्याय पूर्वां संध्यां प्रमुच्यते ,

न जातु कामान्न भयान्न लोभाद् धर्मं त्यजेज्जीवितस्यापि हेतोः।
नित्यो धर्मः सुखदुःखे त्वनित्येजीवो नित्यो हेतुरस्य त्वनित्यः
(महाभारत, स्वर्गारोहण पर्व, अध्याय , श्लोक -)

मीमांसा

महाभारत अत्यंत महत्त्वपूर्ण है। इसमें संदेह नहीं है, परंतु जब नीर-क्षीर विवेक रखकर पारखी दृष्टि से इसका अध्ययन करे तो उसे अगणित रत्न मिलेंगे।

महिमा में लिखी बातें पतनकारी हैं। ब्राह्मण रात भर अनेक स्त्रियों से दुराचार करे और सबेरे महाभारत का पाठ करके उस पाप से मुक्त हो जाय, यह धारणा महा धोखा है और पाप को बढ़ाने वाली है। शास्त्र नाम की पुस्तकों की सारी बातें आंख मूंदकर मानने वाले विद्वानों-अविद्वानों के लिए ऐसे वचन भटकाने वाले हैं। अतएव सावधान! किसी पुस्तक का पाठ करने से पाप नहीं कटेगा। पाप कर्म को छोड़कर जीव का उद्धार है। शास्त्र अध्ययन गुणकारी है। उनका अध्ययन कर तथा पारखी दृष्टि से उनसे सार लेकर अपना सुधार करने से कल्याण है।

ऊपर चार श्लोकों के भाव अमृत तुल्य हैं। उनका पठन, मनन और आचरण करें।

अंतिम एक और महत्त्वपूर्ण भाव की श्लोक लें–

नाहं शप्तः प्रतिशपामि किंचिद् दमं द्वारं ह्यमृतस्येह वेद्मि।
गुह्यं ब्रह्म तदिदं ब्रवीमि न मानुषाच्छ्रेष्ठतरं हि किंचित्
(महाभारत, शांति पर्व, अध्याय , श्लोक)

जो मुझे गाली देता है, मैं उसे थोड़ी भी गाली नहीं देता हूं। मैं समझता हूं कि अपने मन को मार लेना ही अमृत का द्वार है। मैं यहां एक गोपनीय बात बताता हूं, मनुष्य से बढ़कर कुछ नहीं है।

———